अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर

कक्षा : आठवीं- जैनागम स्तोक वारिधि (परीक्षा 04 जनवरी, 2026)

उत्तरतालिका

प्र.1 निम्नलिखित प्रश्नों में से सही उत्तर का क्रमाक्षर कोष्ठक में लिखिए :- 15x1=(15)

(i) जीव धड़े का अधिकार चलता है-
(क) एक सूत्र के आधार पर (ख) दो सूत्र के आधार पर
(ग) चार सूत्र के आधार पर (घ) अनेक सूत्रों के आधार पर (घ)

(ii) मन योगी में देवता के भेद पाये जाते हैं-
(क) 198 (ख)101
(ग) 99 (घ) 48 (ग)

(iii) स्त्रीवेद में मनुष्य के भेद पाये जाते हैं-
(क) 128 (ख) 202
(ग) 131 (घ) 101 (ख)

(iv) 'श्याम' भेद है-
(क) परमाधार्मिक देव का (ख) वाणव्यन्तर देव का
(ग) जम्भृक देव का (घ) इनमें से कोई नहीं (क)

(v) समचतुरस्र संस्थान में जीव के भेद पाए जाते हैं-
(क) 401 (ख) 410
(ग) 212 (घ) 198 (ख)

(vi) वनस्पतिकाय में गुणस्थान पाया जाता है-
(क) 1 (ख) 3
(ग) 4 (घ) 5 (क)

(vii) लोभ कषायी में उपयोग पाये जाते हैं-
(क) 15 (ख) 10
(ग) 6 (घ) 12 (ख)

(viii) सूक्ष्म सम्पराय संयत में योग पाये जाते हैं-
(क) 7 (ख) 1
(ग) 6 (घ) 9 (घ)

(ix) असंज्ञी में लेश्या पायी जाती हैं-
(क) 6 (ख) 4
(ग) 3 (घ) 2 (ख)

(x) तिर्यंच पंचेन्द्रिय में आहारेच्छ का उत्कृष्ट काल होता है-
(क) एक दिन (ख) अन्तर्मुहूर्त
(ग) दो दिन (घ) प्रति समय (ग)

(xi) तीसरे देवलोक में आहरेच्छा का जघन्य काल होता है-
(क)1 दिन (ख) 2000 वर्ष
(ग)2000 वर्ष से कुछ अधिक (घ) 7000 वर्ष (ख)

(xii) क्षायोपशमिक भाव के भेद होते हैं-
(क) 2 (ख) 9
(ग) 18 (घ) 21 (ग)

(xiii) एक जीव में भिन्न समय में अथवा अनेक जीवों में एक समय में कितने भाव हो सकते हैं-
(क) 2 (ख) 3
(ग) 4 (घ) 5 (घ)

(xiv) भगवती सूत्र शतक 25 के कौनसे उद्देशक में सामायिक, छेदोपस्थापनीय, परिहार विशुद्धि और सूक्ष्म सम्पराय चारित्र में क्षयोपशम भाव माना है-
(क) 5 वें (ख) 6 वें
(ग) 7 वें (घ) 8 वें (ग)

(xv) औदयिक भाव में असंयम को कौनसे गुणस्थान तक माना है-
(क) 2 (ख) 3
(ग) 5 (घ) 6 (ग)

प्र.2 निम्न प्रश्नों के उत्तर 'हाँ' अथवा 'नहीं' में दीजिए :- 15x1 = (15)

(i) जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र के चतुर्थ वक्षस्कार के सूत्र संख्या 101 में देवकुरु, उत्तरकुरु को महाविदेह का क्षेत्र बतलाया है। (नहीं)
(ii) क्षेत्र द्वार में जीवों के भेद उनकी उत्पत्ति के आधार पर लिए गए हैं। (हाँ)
(iii) नो भवी नो अभवी में जीव का भेद नहीं पाया जाता है। (हाँ)
(iv) मिथ्या दृष्टि में जीव के 435 भेद पाए जाते हैं। (नहीं)
(v) 98 बोल के बासठिये में नपुंसक वेदी सन्नी मनुष्यों की गणना गर्भज मनुष्यों के अन्तर्गत की जाती है। (हाँ)
(vi) नारकी-देवों के अपर्याप्त अवस्था में दो योग होते हैं। (नहीं)
(vii) मनःपर्याय ज्ञानी नियमा साधु होते हैं। (हाँ)
(viii) परिहार विशुद्धि संयत में 6 से 9 तक चार गुणस्थान मिलते हैं। (नहीं)
(ix) अचरम जीवों में अभव्य तथा सिद्ध दोनों का समावेश किया जाता है। (हाँ)
(x) अनाभोग आहार के पुद्गल सभी जीवों में प्रतिसमय निरन्तर ग्रहण होते हैं। (हाँ)
(xi) उपशम भाव 4 से 11 गुणस्थान तक रहता है। (हाँ)
(xii) भाव लोक प्रकाश में उपशम चारित्र 8-11 गुणस्थान तक माना है। (हाँ)
(xiii) औदयिक भाव में असंयम को छठे गुणस्थान तक माना है। (नहीं)
(xiv) पहले से पाँचवें गुणस्थान वाले जीव आत्मारंभी, परारंभी तथा अनारंभी है। (नहीं)
(xv) तेजो, पद्म, शुक्ल लेश्या वाले प्रमादी साधु शुभ योगी तथा अशुभ योगी दोनों प्रकार के हो सकते हैं। (हाँ)

प्र.3 निम्नलिखित में क्रम से सही जोड़ी मिलाकर उत्तर रिक्तस्थान में लिखिए:- 10x1 = (10)

(i)	संयतासंयत में मनुष्य का भेद	(क) 9	15
(ii)	स्त्रीवेद में तिर्यंच का भेद	(ख) 26	10
(iii)	एकान्त तेजो लेशी में देवता के भेद	(ग) 15	26
(iv)	आहारक में जीव	(घ) 10	8 (बोनस अंक दें)
(v)	अपर्याप्त में उपयोग	(च) 1	9
(vi)	विभंगज्ञानी में उपयोग	(छ) 12	6
(vii)	मनुष्य में आहारेच्छा का उत्कृष्ट काल (दिवस में)	(ज) 21	3
(viii)	11वें एवं 12वें गुणस्थान में क्षयोपशम के बिना भाव	(झ) 8	12 (बोनस अंक दें)
(ix)	औदयिक भाव के भेद	(य) 3	21
(x)	सान्निपातिक में पंच संयोगी का भेद	(र) 6	1

प्र.4 मुझे पहचानो :- 15x1 = (15)

(i) प्रज्ञापना पद-2, लोकप्रकाश आदि में हमारी उत्पत्ति पहली नारकी में 1000 योजन की ऊपर की ठीकरी के अन्तर्गत बतलाई गई है। व्यन्तरों की
(ii) मैं छठे कर्मग्रन्थ की वह टीका हूँ जिसमें सम्यक्त्व मोहनीय का वेदन करते-करते जीव का काल कर चारों गतियों में जाने का उल्लेख है। सप्ततिका प्रकरण टीका
(iii) मैं वह सूत्र हूँ जिसके छठे पद में नवग्रेवेयक में सलिंगी सम्यग्दृष्टि साधु तथा सलिंगी मिथ्यादृष्टि साधु ही जाने का उल्लेख है। प्रज्ञापना सूत्र
(iv) मैं लोक का एक भेद हूँ मुझमें जीव के 115 भेद पाये जाते हैं। नीचा लोक
(v) मैं वह संस्थान हूँ, जिसमें जीव के 193 भेद पाये जाते हैं। हुण्डक संस्थान
(vi) मैं वह सूत्र हूँ जिसके तीसरे पद में 22 द्वारों का वर्णन है। पन्नवणा

(vii) काय द्वार के अल्पबहुत्व में हम सबसे थोड़े हैं। त्रसकाय
(viii) वेद द्वार में अल्पबहुत्व में हम सबसे थोड़े हैं। पुरूषवेदी
(ix) सम्यक्त्व द्वार में अल्पबहुत्व में हम सबसे थोड़े हैं। वेदक समकित
(x) क्षयोपशम भाव के 18 भेदों में कर्मग्रन्थ मुझे नहीं गिनाया है। मिश्रदृष्टि
(xi) पारिणामिक भाव के अन्तर्गत भव्यत्व भाव मेरे आधार पर 1 से 12 गुणस्थान तक माना गया है। कर्मग्रन्थ भाग 4
(xii) मैं वह गुणस्थान हूँ जिसमें चारित्र मोहनीय की सभी प्रकृतियों का पूर्ण उपशम होता है। ग्यारहवाँ
(xiii) मेरा आहारेच्छा का जघन्य एवं उत्कृष्ट काल पृथक्त्व दिवस होता है। ज्योतिषी
(xiv) उत्पत्ति देश में जो आहार योग्य पुद्गलों का समूह है, हम उसका आहार करने वाले हैं। ओज आहारी
(xv) हम ऐसी लेश्याएँ हैं जिनमें संयत, असंयत, प्रमादी और अप्रमादी के भेद भी होते हैं। तेजो, पद्म और शुक्ल लेश्या

प्र.5 निम्न प्रश्नों के उत्तर एक-दो वाक्यों में दीजिए- 9x2 = (18)

(i) अवधि दर्शन में नरक, तिर्यंच, मनुष्य, देव, समुच्चय के भेद बताइए।

उ.	नरक	तिर्यंच	मनुष्य	देवता	समुच्चय
	14	5	30	198	247

(ii) लोकान्तिक देवों के 9 भेद लिखिए।
उ. 1. सारस्वत, 2. आदित्य, 3. वह्नि, 4. वरूण, 5. गर्दतोय, 6. तुषित, 7. अव्याबाध, 8. आग्नेय और 9. अरिष्ट।
(iii) नारकी देवों के अपर्याप्त अवस्था में कौन-कौन से योग होते हैं?
उ. 1. वैक्रिय, 2. वैक्रिय मिश्र और 3. कार्मण काय योग।
(iv) 13,14 वें गुणस्थान वाले अनिन्दिय क्यों कहलाते हैं ?
उ. 13, 14वें गुणस्थान वालों में जानने-देखने-चिन्तन-मनन करने रूप कार्यों में इन्द्रिय व मन का उपयोग नहीं होने से वे अनिन्द्रिय कहलाते हैं।
(v) जीव कब अनाहारक हो जाता है ?
उ. 1,2,4,13,14 इन पाँच गुणस्थानों में अनाहारक होता है।
(vi) 'प्रक्षेपाहार' को समझाइए।
उ. मुख से या नली आदि से इंजेक्शन आदि से शरीर में आहार डालना ग्लूकोज आदि चढ़ाना प्रक्षेपाहार कहलाता है।
(vii) नैरयिक किस प्रकार के पुद्गलों का आहार करते है, किस प्रकार के नहीं ?
उ. नैरयिक अचित्त पुद्गलों का आहार करते हैं, सचित्त और मिश्र का आहार नहीं करते।
(viii) क्षायिक भाव को समझाइए।
उ. कर्मों के आत्यन्तिक क्षय से प्रकट होने वाला भाव क्षायिक भाव है। यह सादि-अनन्त है।
(ix) वेदक समकित किसे कहते हैं ?
उ. क्षायिक समकित पाने के एक समय पूर्व की अवस्था अर्थात् समकित मोहनीय के चरम दलिक का वेदन, वेदक समकित कहलाती है।

प्र.6 निम्न प्रश्नों के उत्तर दो-तीन पंक्तियों में लिखिए : - 9x3 = (27)

(i) तेजो लेश्या में पाये जाने वाले जीव के 343 भेदों को समझाइए।
उ. तेजो लेश्या में 343 भेद (5 सन्नी तिर्यंच के अपर्याप्त-पर्याप्त, 3 बादर पृथ्वी, पानी, वनस्पति के अपर्याप्त= 13 तिर्यंच के, 101 सन्नी मनुष्य के अपर्याप्त-पर्याप्त = 202 मनुष्य के, 64 जाति के देवता के अपर्याप्त-पर्याप्त = 128 देवता 12+202+128=343)

(ii) धातकी खण्ड और अर्द्धपुष्कर द्वीप में पाए जाने वाले जीव के 102 भेदों को समझाइए।

उ. धातकीखण्ड एवं अर्द्धपुष्करद्वीप में 102 भेद (48 तिर्यंच के, 2 भरत, 2 ऐरवत, 2 महाविदेह, 2 देवकुरू, 2 उत्तरकुरू, 2 हरिवास, 2 रम्यक्वास, 2 हैमवत, 2 ऐरण्यवत, इन 18 के अपर्याप्त, पर्याप्त और सम्मूर्च्छिम= 54 भेद मनुष्य के)।

(iii) आहारक में जीव के 347 भेदों को समझाइए।

उ. अनाहारक में 347 भेद (7 नारकी के अपर्याप्त, 24 तिर्यंच के अपर्याप्त, 101 सम्मूर्च्छिम मनुष्य के, 101 सन्नी मनुष्य के अपर्याप्त और 15 कर्मभूमिज सन्नी मनुष्य के पर्याप्त और 99 देवता के अर्याप्त)।

(iv) ज्ञानद्वार की अल्पबहुत्व समझाइए।

उ. अल्पबहुत्व- सबसे थोड़े मनःपर्याय ज्ञानी, उनसे अवधिज्ञानी असंख्यात गुण, उनसे मति-श्रुत ज्ञानी परस्पर तुल्य और विशेषाधिक, उनसे विभंग ज्ञानी असंख्यात गुण, उनसे केवलज्ञानी अनन्त गुण, उनसे सज्ञानी विशेषाधिक, उनसे मतिश्रुत अज्ञानी परस्पर तुल्य और अनन्त गुण।

(v) दर्शन द्वार में जीव, गुणस्थान, योग, उपयोग, लेश्या को समझाइए।

उ.

	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1. चक्षुदर्शनी में	6	12	14	10	6
2. अचक्षुदर्शनी में	14	12	15	10	6
3. अवधिदर्शनी में	2	12	15	10	6
4. केवलीदर्शनी में	1	2	7	2	1

(vi) आत्मारम्भी व परारम्भी को समझाइए।

उ. आत्मारंभी- जो स्वयं पाप कार्यों में प्रवृत्त होता है या अपनी आत्मा द्वारा स्वयं पाप कार्य करता है, उसे आत्मारंभी कहते हैं।

परारंभी- दूसरे जीवों को पाप कार्य में प्रवृत्त करने वाला या दूसरों से हिंसादि पाप कार्य कराने वाला, परारंभी कहलाता है।

(vii) अनारम्भी व शुभयोगी को समझाइए।

उ. अनारंभी- जो न तो स्वयं पाप कार्य करता हैं और न ही दूसरों से कराता है। प्रत्येक प्रवृत्ति उपयोग पूर्वक करता है, वह संयत अनारंभी है। अर्थात् जो न तो आत्मारंभी है, न परारंभी है और न तदुभयारंभी है, उसे अनारंभी कहते हैं।

शुभयोगी- जो उपयोगपूर्वक, सावधानीपूर्वक समत्व भावों के साथ योगों की प्रवृत्ति करता है, उसे शुभयोगी कहते हैं।

(viii) क्षायोपशमिक भाव को समझाइए।

उ. कर्मों के क्षयोपशम से प्रकट होने वाले भाव को क्षायोपशमिक भाव कहते हैं। क्षयोपशम एक प्रकार की आत्मिक शुद्धि है जो कर्म के एक अंश का प्रदेशोदय द्वारा क्षय होते रहने पर प्रकट होती है।

(ix) सान्निपातिक भाव को समझाइए।

उ. जीव में कुछ ऐसे भाव भी पाये जाते हैं जो दो या दो से अधिक भावों से मिले हुए होते हैं। ये सान्निपातिक भाव कहलाते है।